ISSN : 3048-6203 Volume -2| Issue -2| July - Dec 2025

शोध भूमि
शिक्षा एवं शिक्षण शास्त्र विषय की पूर्व समीक्षित शोध पत्रिका
Page No. : 194-199

# सुधा अरोड़ा के कथा–साहित्य में नारी चेतना

**रत्ना सिंह**
शोध छात्र–हिन्दी
म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि.,चित्रकूट, सतना (मध्यप्रदेश)
ईमेल – vishnucktd@gmail.com
**प्रोफे. ललित कुमार सिंह**
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि.,चित्रकूट, सतना (मध्यप्रदेश)

**सारांश**

यह शोध पत्र हिन्दी की सुप्रसिद्ध सातवें दशक की कथाकार सुधा अरोड़ा के कथा–साहित्य का अध्ययन नारी–चेतना के संदर्भ में किया गया है। इनकी कहानियों में नारी चेतना का स्वर अत्यंत यथार्थपरक और संवेदनशील रूप में दिखाई देता है। सुधा अरोड़ा के साहित्य में स्त्री के दैनिक जीवन से जुड़े अनुभवों को आधार बनाकर उसकी आत्मबोध की प्रक्रिक्रा, मानसिक स्थिति और संघर्ष को उजागर करती है। इनकी कहानियों में नारी–चेतना चुप्पी से प्रारम्भ होती है। प्रारम्भ में स्त्री सामाजिक एवं पारिवारिक दबावों के कारण मौन रहती है, लेकिन समय के साथ वह चुप्पी सोच एवं आत्ममंथन में बदल जाती है। अध्ययन से पता चलता है कि सुधा अरोड़ा की नारी चेतना किसी कठोर या उग्र विचारधारा पर आधारित नहीं है, बल्कि सहज और मानवीय है। इनकी कहानियाँ स्त्री को आत्मसम्मान, स्वतंत्र सोच और निर्णय क्षमता की ओर प्रेरित करती है। इस प्रकार इनका कथा साहित्य हिन्दी साहित्य में नारी चेतना को समझने और मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

**बीज शब्द** : कथा–साहित्य, नारी–चेतना, दबाव, आत्मसम्मान, संवेदनशीलता

समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में सुधा अरोड़ा का नाम स्त्री–विमर्श की अग्रणी आवाज के रूप में जाना जाता है। 1960 के दशक से लेखन प्रारम्भ करने वाली इस कथाकार ने अपने साहित्य में उन महिलाओं को स्थान दिया है जो अक्सर समाज की मुख्यधारा की कथाओं में हाशिए पर छोड़ दी जाती थीं। उनके कथा साहित्य में स्त्री कोई मात्र 'वस्तु' या 'दया का पात्र' नहीं बल्कि एक सोचने, निर्णय लेने, स्वयं को पहचानने और सक्रिय सत्ता के रूप में उभरती है। इनकी कहानियाँ पढ़कर समझ आता है कि स्त्री का जीवन केवल घर–परिवार तक सीमित नहीं है, उसके भीतर भी सपने, दर्द, सवाल और इच्छाएँ होती हैं।

स्त्री–विमर्श का मतलब है–स्त्री की स्थिति, उसके अधिकार, उसके दुःख, उसकी इच्छाओं और उसके संघर्षों को केन्द्र में रखकर बात करना। उनकी कहानियाँयह बताती हैं कि स्त्री भी अपनी पहचान चाहती है, वह सम्मान चाहती है, और सबसे जरूरी–वह सुनी जाना चाहती है।

सुधा अरोड़ा के कथा–संसार में समाज की तीन परतें सबसे ज्यादा दिखाई देती है। मध्यमवर्गीय स्त्री का जीवन सबसे जटिल और सबसे दबा हुआ, दोहरी जिम्मेदारियों में पिसती कामकाजी स्त्री, सुविधाओं के बावजूद भीतर से टूटती शहरी स्त्री। इन सभी में संघर्ष अलग दिखाता है, लेकिन पीड़ा का मूल समान है–अस्तित्व को पहचानने का संघर्ष। इनकी कहानियों में स्त्री की चुप्पी सबसे प्रभावी हथियार है यह चुप्पी निराशा नहीं, बल्कि भीतर का एकत्रित विद्रोह है। समय आने पर यह चुप्पी आवाज बनती है।

'यही सच है' कहानी में स्त्री को पत्नी, बहू, माँ सभी भूमिकाओं में इतना जकड़ दिया जाता है कि उसकी व्यक्तिगत इच्छाएं दम तोड़ देती है। लेखका कहती है ''औरत अगर अपने लिए जीना चाहे तो सबसे पहले उसका अपना घर ही उसके खिलाफ खड़ा हो जाता है। नायिका के जीवन में समझ और प्रेम का अभाव भावनात्मक सूखापन उसकी आत्मा को खत्म कर देता है। ''वह अपने ही घर में

मेहमान की तरह रहती रही–अपने निर्णयों पर कभी उसका अधिकार नहीं रहा।'' उसका अस्तित्व धीरे–धीरे खत्म हो जाता है, परन्तु अंत में उसका मौन समाज के विरुद्ध एक निर्णायक 'ना' बनकर उभरता है।

उनकी सर्वाधिक चर्चित कहानी 'यही सच है स्त्री–मन की गहरी जटिलताओं को उद्घाटित करती है। यहाँ नायिका का संघर्ष मात्र सम्बंधों का संघर्ष नहीं, बल्कि यह उसकी आत्म–गरिमा की रक्षा का प्रश्न है। पुरुष केन्द्रित सामाजिक अपेक्षाओं और स्त्री के भावनात्मक अस्तित्व के बीच जो टकराव है, वह कहानी के मूल में दर्ज है। यह केवल किसी एक स्त्री की कथा नहीं रहती, बल्कि अनगिनत स्त्रियों के जीवन का प्रतिनिधित्व करने लगती है, जिन्हें अक्सर समाज एक व्यक्ति के रूप में देखने के बजाय किसी भूमिका पत्नी, प्रेमिका, बहू, मित्र तक सीमित कर देता है। सुधा अरोड़ा इस सीमित दृष्टि का गहराई से प्रतिरोध करती हैं और स्त्री को पूर्ण मनुष्य के रूप में स्वीकारने की आवश्यकता पर बल देती हैं।

सुधा अरोरा के स्त्री–विमर्श की एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि वे स्त्री की समस्याओं को केवल सामाजिक या आर्थिक आयामों में ही नहीं रखती, बल्कि मानसिक और भावनात्मक स्तर पर भी गहराई से छूती हैं। विवाह संस्था को वे केवल एक सामाजिक अनुबंध के रूप में नहीं देखती, बल्कि एक ऐसे ढांचे के रूप में भी समझती हैं, जिसने स्त्री को अक्सर कर्तव्य और त्याग के नाम पर संवेदनहीन बना दिया है। उनकी कहानियों में स्त्री सिर्फ शारीरिक श्रम नहीं करती बल्कि वह निरंतर भावनात्मक श्रम भी करती है–सबके लिए सोचती है, सबके लिए चिंता करती है, पर बदले में उसे केवल अपेक्षाएं और आलोचनाएं प्राप्त होती हैं। इस भावनात्मक शोषण को साहित्य में केन्द्र में लाना सुधा अरोड़ा की बड़ी उपलब्धि मानी जाती है।

सुधा अरोड़ा का स्त्री–विमर्श न तो आक्रामक है और न ही पुरुष विरोधी। यह मानवीय, संवेदनशील और अनुभव आधारित है। वे समाज के पितृसत्तात्मक ढांचे द्वारा निर्मित स्त्री के संकटों को उजागर करती है, स्त्री के दैनिक जीवन में उपस्थित

संघर्ष–चाहे वह घरेलू श्रम हो, सम्बंधों का बोझ हो, या कार्यस्थल का दमन–उनकी कहानियों का केन्द्रीय मुद्दा है। उनके अनुसार स्त्री–विमर्श केवल पुरुष, सर्चस्व का विरोध नहीं, बल्कि स्त्री की स्वतंत्र अस्मिता, समानता और स्वायत्ता की चेतना है। उनकी रचनाओं में सामान्य, मध्यमवर्गीय, नौकरी पेशा, गृहिणी, वृद्धावस्था से गुजरती या युवा आकांक्षाओं से भरी स्त्रियाँसब अपनी–अपनी वास्तविकताओं के साथ उपस्थिति होती हैं। इन कहानियों में स्त्री का संघर्ष किसी बाहरी शत्रु से नहीं, बल्कि पितृसत्ता की उस गहरी धंसी हुई संरचना में है, जो घर, समाज, रिश्तों और भावनाएं सबमें व्याप्त हैं। 'भय', 'रहमत साहब की बेटी', 'दहलीज पर संवाद', 'मैरिट गर्ल', 'एक और औरत' कहानी जैसी कहानियाँ स्त्री–चेतना के विविध आयामों को अत्यंत मार्मिकता और संवेदनशीलता के साथ सामने लाती हैं। इस दृष्टि से उनका साहित्य नारी चेतना का प्रस्थान बिन्दु माना जा सकता है।

मेरिट गर्ल कहानी में लेखिका लिखती हैं कि ''मेरी मेधा सबको दिखाई देती थी, पर मेरे सपने किसी को दिखाई नहीं देते थे।'' यह कहानी दिखाती है कि शिक्षित स्त्री भी उतनी ही कैद है जितनी अशिक्षित क्योंकि शिक्षा से अधिक शक्तिशाली सामाजिक अनुबंधन है। ''मैने जाना कि मेरिट सिर्फ अंकों में नहीं, हिम्मत में भी होती है और वह हिम्मत मुझे रोज अपने भीतर जुटानी पड़ती थी।'' लोग कहते थे लड़की हो, इतना पढ़कर क्या करोगी यह सवाल मेरे हर उत्तर को छोटा कर देता था।

दहलीज पर संवाद कहानी में सुधा जी कहती है ''दहलीजे सिर्फ घरों में नहीं होती, औरत के भीतर भी होती है–और उन्हें पार करना ही उसकी मुक्ति है।'' दहलीज पर खड़ी स्त्री हमेशा दो दुनियाओं के बीच झूलती रहती है–एक जो उसे रोकती है और एक जो उसे पुकारती है। इस कहानी की स्त्री सोचती है कि क्या दहलीज इसलिए बनाई जाती है कि स्त्री पूरा आकाश न देख सके।

भय कहानी दर्शाती है कि स्त्री डर को जन्म से सीखती है विवाह में, रिश्तों में, घर में, सड़क पर और नौकरी में भय स्त्री की मानसिक संरचना बन जाता है पर कहानी का अंत बताता है कि चेतना भय को परास्त कर सकती है।

नारी–चेतना का अर्थ है स्त्री का स्वयं को पहचानना अपने निर्णयों पर अधिकार पाना और अपने अस्तित्व को स्वीकारना।

यह चेतना किसी विद्रोह से जन्म नहीं लेती, बल्कि भीतर संचित असंख्य प्रश्नों, कुंठाओं, अपमानों और समझौतों के लम्बे अनुभव से बनती हैं। सुधा अरोरा इस प्रक्रिक्रा को बहुत सूक्ष्मता से चित्रित करती है, जिससे स्पष्ट होता है कि नारी–चेतना केाई अचानक होने वाला परिवर्तन नहीं बल्कि एक गहरी, धीमी और जटिल आत्म चेतना की यात्रा है।

लेखिका की दृष्टि यह है ''स्त्री और पुरुष बराबरी में ही खूबसूरत हैं, पर बराबरी तभी संभव है जब स्त्री स्वयं को पहचाने।

**निष्कर्ष :**

अंततः कहा जा सकता है कि सुधा अरोरा का कथा–साहित्य हिंदी में स्त्री–विमर्श को एक नई दिशा देने वाला साहित्य है। उन्होंने स्त्री की पीड़ा, संघर्ष, अपमान या दर्द को 'करुणा' का विषय नहीं बनाया, बल्कि उसे चेतना और प्रतिरोध का केन्द्र बनाया। उनकी कहानियों में स्त्री की स्वतंत्रता, उसके सपने, उसकी इच्छाएं और उसकी पहचान, इन सबको गंभीरता और सम्मान के साथ प्रस्तुत किया गया है। वे यह स्थापित करती है कि स्त्री मात्र सम्बंधों की भूमिका नहीं, बल्कि स्वयं एक पूर्ण अस्तित्व है जिसकी अपनी इच्छाएं, आकांक्षाएं और अधिकार हैं। उनका साहित्य पाठक को केवल संवेदनशील नहीं बनाता, बल्कि सोचने पर विवश करता है, और यह किसी भी प्रामाणिक स्त्री–विमर्श की सफलता है। यही कारण है कि उनका कथा–साहित्य आधुनिक नारी–विमर्श की रीढ़ कहा जा सकता है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सुधा अरोरा, यही सच है, नई दिल्ली राजकमल प्रकाशन, 1974.
2. सुधा अरोरा, महिलाएँ और दूसरे सवाल, दिल्ली सामयिक प्रकाशन.
3. सुधा अरोरा, रचना समय और स्त्री प्रश्न, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली.
4. सुधा अरोरा, कथाकार की दृष्टि, हंस विशेष स्त्री लेखन, अंक.
5. सुधा अरोड़ा, कहानी संग्रह